संस्कृति निर्माता युगादिदेव

श्री शांतिलाल खेमचंद शाह, बी. ए.

भारतीय संस्कृति में भगवान् ऋषभदेव का स्थान अनोखा है। जंगल में मंगल कर मानव को उन्होंने मानवता की सभ्यता प्रदान की। पशुसमाजवत् विषयसुख और पेट पालने में ही अपने को कृतार्थ मानने वाले मानव को आत्मा के अमर खजाने का पता उन्होंने बताया। संस्कृति की उन्होंने एक ऐसी मजबूत नींव डाली कि उस पर युगयुग तक सभ्यता का प्रासाद खड़ा हो सका। केवल तत्त्वज्ञान की ही सुधा उन्होंने नहीं बरसाई, प्रत्युत व्यवहार को भी उन्होंने प्रधानता दी। व्यवहार की संपूर्ण उपेक्षा कर कोरे निश्चय की बातें करनेवालों को यह भलीभांति समझना चाहिए कि निश्चय को संपूर्णतया समझनेवाले एक महान् मानव ने ही व्यवहार का निर्माण किया है।

सब धर्मों की जड़ तो एक ही है, हर पन्थ उसकी एक एक डाली है। यह जड़ है ऋषभदेव। दुनिया के सारे धर्म, कर्म, व्यवहार, ज्ञान, ध्यान, रीति, नीति के वे निर्माता हैं। उन्हें अपनाकर हम अलग अलग नाम देते हैं, किन्तु वस्तु तो वही है।

वैदिक लोग विष्णु के चौवीस अवतार मानते हैं। उनमें आठवाँ क्रम ऋषभदेव का ही है। इस आठवें अवतार में उन्होंने परमहंस का मार्ग बताया। उनके पिता का नाम नाभि राजा और माता का नाम मरुदेवी लिखा है। भागवत के पंचम स्कंध में बड़े विस्तार के साथ ऋषभदेव का जीवन है। ऋषभदेव का उपदेश भी हमें तीर्थंकरों के उपदेश-सा मालूम होगा। रजोगुणी लोगों को मोक्षमार्ग बताने के लिये यह अवतार है। नगरपुराण के भवावतार नामक चौदहवें शतक में कहा है।

कुलादिबीजं सर्वेषां, प्रथमो विमलवाहनः।
चक्षुष्मान् च यशस्वी चाऽभिचंद्रोऽथ प्रसेनजित्।
मरुदेवश्च, नाभिश्च, भरते कुलसत्तमाः।
अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभेर्जात उरुक्रमः॥

भागवतपुराण में सात कुलकरों के स्थानपर सात अवतार की कल्पना कर आठवें अवतार के रूप में ऋषभदेव को माना है।

जंगल में मंगल

जंगल में रहनेवाले, पेड़-पौधोंपर जीवन बसर करने वाले मानव को असि, मसि और कृषि का महत्त्व समझाकर सभ्यता के मार्गपर लानेवाले ऋषभदेव हैं। कृषिप्रधान भारतवर्ष के उद्धार का मार्ग उन्होंने उस काल में समझाया जब नैसर्गिक कामपूर्ति और उदरभरण के सिवाय आदमी कुछ सोच ही नहीं सकता था।

दिन ब दिन पेड़ घटने लगे। फलों पर निर्वाह होना मुश्किल मालूम होने लगा। जंगली पशुओं के कारण जीवन में संरक्षण न था। युगल पैदा होता था जिसमें बाल और बालिका होते थे। जवानी में वही पति-पत्नी बन संतान पैदा करते थे। वे ऋषभदेव थे कि जिन्होंने प्रथम लग्नविधि का निर्माण किया। लग्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् विषय वासना का नियमन ही नहीं किन्तु लग्न यानी दो जीवों की परस्पर कल्याण के निमित्त समर्पण की भावना। विवाह प्रथा का प्रारंभ तभी से हुआ।

खेती का महत्त्व बैल पर निर्भर है। ऋषभदेव ने यह बात स्पष्ट कर जनता को वृषभ का महत्त्व समझाया। बैलों को नष्ट होने से बचाया। इसीसे संभवतः लोगों ने उन्हें वृषभदेव–ऋषभदेव–के नाम से पहचाना।

जब लोगोंपर संकटों की परंपरा आने लगी, तब किंकर्तव्यमूढ बनी हुअी जनता ने अपनी इच्छा से अपने लिये ऋषभदेव को **राजा** चुना। राजा बननेपर व्यक्ति संपूर्णतया प्रजा का सेवक बनता है, यह बात ऋषभदेव ने सिद्ध की। 'हा' कार 'मा' कार और 'धिक्' कार की नीति का अंकुश अब जनता पर न रहने के कारण राजदंड द्वारा उन्होंने लोगों के दुश्मनों का दमन किया। कुम्भकार, लुहार, चित्रकार, जुलाहा, और हजाम इन पाँच कारीगरों की सृष्टि की। पुरुषों की ७२ कलाएँ, स्त्रियों की ६४ कलाएँ और ब्राह्मी प्रमुख १८ लिपियाँ उन्होंने प्रचारित कीं।

इस प्रकार जब लोग सुख चैनसे जिंदगी बसर करने में समर्थ हुए, तब उन्होंने आत्मज्ञान की ओर जनता को खींचा। अुनके पुत्रों में सबसे बड़ा भरत था और अन्य १०० पुत्र थे। ब्राह्मी और सुंदरी ये दो कन्याएँ थी। राजभार उनपर डालकर वे मुनि बने। मुनि बनने के लिये आसक्ति तोड़ना जरूरी है, इसलिये उन्होंने "वरसीदान" दिया। एक वर्ष तक याचकों को संतुष्ट करनेवाला महान् दान देने के पश्चात् वे मुनि बने। कितने ही राजा, सामंतादि उनके साथ मुनि बने। मुनि के महान् उग्र यम नियमों के पालन में उन्हें एक वर्ष तक शुद्ध आहार न मिल सका। अन्त में वैशाख शुदि ३ के दिन उनके प्रपौत्र श्रेयांसकुमार ने हस्तिनापुर में उन्हें इक्षुरस देकर पारणा करवाया। पूर्णज्ञान का साक्षात्कार पाने पर समोवसरण में जब वे विराजमान हो उपदेश देते थे तब चारों ओर के लोगों को वे हमारी ओर मुख कर ही बोल रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता था। इससे ही चतुर्मुखी ब्रह्म के रूप में लोग उन्हें मानने लगे। अष्टापद पर्वत के ऊपर उनका निर्वाण हुआ। यह वही पहाड़ है जिसे लोग कैलास भी कहते हैं। उसके ऊपर निर्मित ऋषभदेव के स्मारक की रक्षा के लिये भरत चक्रवर्ति ने आठ सीढियाँ बनवाई, इसलिये उसे अष्टापद कहते हैं।

आज के बहुत से देशों के नाम ऋषभ देव के पुत्रों के नाम पर से ही हैं।

ऋषभदेव आदिम तीर्थंकर थे, इसी लिये 'आदम' के नाम से आदि पुरुष को लोग पहचानते हैं।

सूर्यवंश की उत्पत्ति इन्हींसे है—

ऋषभदेव
|
भरत
|
सूर्ययशा

चंद्रवंश की उत्पत्ति भी इन्हींसे—

ऋषभदेव
|
बाहुबली
|
चंद्रयशा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तापसों की उत्पत्ति

जब ऋषभदेव को एक वर्ष तक शुद्ध आहार न मिला तब उनके साथ के दीक्षित सामंतादिकों ने कंद, फलादि पर निर्वाह करना शुरू किया, यहाँ से ही तापसों की परंपरा चली।

ब्राह्मणों की उत्पत्ति

भरत राजा ने चक्रवर्ति बनने के लिये भाइयों पर आक्रमण किया। भाई ऋषभदेव के पास गये। योगीश्वर के पास वे भी योगी बने। शरमिंदा बनकर भरत भाइयों से क्षमा मांगने और उनको अन्नपान देने गया। "साधु को अपने लिये बना हुआ अन्न और राजपिंड त्याज्य है" यह ऋषभदेवजी से सुनकर उसने सुश्रावकों को (शुद्ध-आचार-विचारवान् ज्ञानी लोगों को) जिमाना शुरू किया। वे हमेशा भरत को आशीर्वाद से सावधान करते "**जीतो** भवान्। वर्धते भयं। तस्मात् मा हन, मा हन।" 'मा हन' का उपदेश देनेवाले ये माहन या ब्राह्मण बने। उनके लिए इतर शब्द वृद्धसावया भी अनुयोग द्वार में है।

यज्ञोपवीत की उत्पत्ति

राजभोजनालय में भोजन करनेवालों की संख्या दिन ब दिन बढ़ने लगी, तब भरत राजा ने काकिणी रत्न से 'दर्शन-ज्ञान-चरित्र' ये रत्नत्रयी की निशानी के रूप में तीन रेखाएँ की। काकिणी रत्न के अभाव से सूर्ययशा ने सोने की, बाद में चंद्रयशा ने रूपे की जनेऊ कराई जो आज सूत्र की बनती है।

वेदों की उत्पत्ति

ज्ञानी माहणों ने ऋषभदेव की वाणी को गुँथकर चार वेदों की रचना की—१ संसार दर्शन, २ संस्थानपरामर्श, ३ तत्त्वावबोध, ४ विद्याप्रबोध। कालानुक्रम से ८ वें तीर्थंकर के बाद जीवहिंसा से युक्त नये वेदों की रचना की गई।

अग्निहोत्री और अग्निपूजा

"**अग्निमुखा वै देवाः**" यह श्रुति ऋषभदेव के निर्वाण के बाद प्रचलित हुई, कारण उनकी चिता को अग्नि लगाने का सम्मान अग्निकुमार देव को मिला। इस वक्त उस चिता में से अग्नि लेनेवाले ब्राह्मण अग्निहोत्री कहलाये। उस अग्नि को कायम रखकर उसे पूजने लगे। अग्निपूजा का यही रहस्य है।

सांख्यमत

ऋषभदेव
|
भरत
|
मरीचि त्रिदंडी (संन्यासी बना हुआ)
मरीचि के शिष्य—कपिलमुनि
कपिलमुनि के शिष्य—आसुरी
आसुरी के शिष्य—शंख (सांख्य मत के स्थापक)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरबस्तान में मूर्तिपूजा

हजरत पैगंबर के जीवन में हम पढ़ते हैं कि काबा के मंदिर में ३६००० मूर्तियाँ पूजी जाती थीं। संशोधक कहते हैं कि मूर्तिपूजा जैनियों से प्रचलित है। ऋषभदेव के पुत्र बाहुबली तक्षशीला के राजा थे। ऋषभदेव ने उस तरफ विहार किया हुआ है। 'इस्लाम' शांति का पर्यायवाची है। ☪ चांदतारा का चिह्न सिद्धशिला के रूप में जैन हमेशा मानते हैं। मक्काशरीफ के किसी क्षेत्र में जीवहिंसा की मनाई है।

महादेव

महादेव की मान्यता के बारे में तथा स्वरूप या चरित्र के बारे में जो पुराणों में कथाएं हैं उनका समन्वय करना बड़ा कठिन है। नंदिकेश्वर की उत्पत्ति भी विस्मय पैदा करती है। क्या ऋषभदेव ही महादेव के रूप में तो नहीं माने जाते होंगे? वृषभ पर महादेवजी बैठते हैं इससे भी शायद यही अर्थ तो नहीं अभिप्रेत होगा? आचार्य मानतुंग ठीक ही कहते हैं—

"बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्।
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रयशङ्करत्वात्॥
धाताऽसि धीरशिवमार्गविधेर्विधानात्।
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि॥"

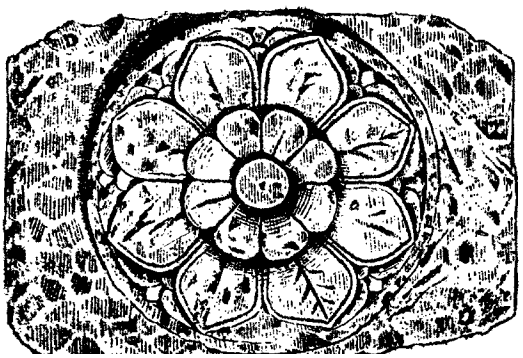

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org